# जानकारी के बावजूद ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि

भारत डोगरा

यह एक बड़ी चिंता का विषय है कि विश्व की कुछ सबसे गंभीर समस्याओं को सुलझाने में अपेक्षित प्रगति नहीं हो रही है। जलवायु बदलाव की समस्या ऐसी ही एक समस्या है। वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन व नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसों की तेज़ वृद्धि से धरती बहुत गर्म हो रही है। यह तरह-तरह के प्रतिकूल मौसम, बढ़ती आपदाओं, स्वास्थ्य व कृषि समस्याओं के रूप में प्रकट हो रही है। समुद्र का स्तर तेज़ी से बढ़ने से कई टापू देशों व सघन आबादी के तटीय क्षेत्रों के डूबने का खतरा बढ़ गया है।

धरती के तापमान में वृद्धि को अधिकतम 2.0 डिग्री सेल्सियस तक रोकने पर काफी हद तक आम सहमति बनी है। वर्ष 1870 से अभी तक 0.8 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि पहले ही हो चुकी है। दूसरे शब्दों में कहें तो ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को 2900 अरब टन तक रोकना ज़रूरी है, पर 1870 से अब तक लगभग 1600 अरब टन की वृद्धि हो चुकी है। प्रति वर्ष 50 अरब टन की वृद्धि हो रही है। ऐसे ही चलता रहा तो कुछ ही वर्षों में पूरी कार्बन स्पेस समाप्त हो जाएगी। यह जब भी हो, बहुत बड़ी चिंता का विषय है।

यह सीमा लांघने के बाद सबसे बड़ा खतरा है कि स्थिति हमारे नियंत्रण से बाहर जा सकती है। इस उलटफेर बिंदु के बाद जो बदलाव होंगे वे सदा के लिए धरती की जीवनदायी क्षमताओं को क्षतिग्रस्त कर सकते हैं।

*लेंसेट* शोध पत्रिका द्वारा स्थापित 'जलवायु बदलाव व स्वास्थ्य आयोग' ने जून 2015 में बताया है कि ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन जिस तेज़ी से बढ़ रहा है वह वर्ष 2100 में धरती की तापमान वृद्धि को 2.0 डिग्री सेल्सियस के लक्ष्य तक सीमित रखने से मेल नहीं रखता है, अपितु उससे तो अगले 85 वर्षों में 4.0 डिग्री सेल्सियस वृद्धि की संभावना

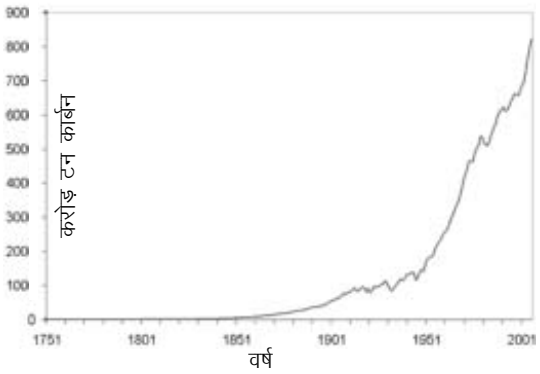


बनती है। उसके बाद भी स्थिरता नहीं आएगी बल्कि 0.7 डिग्री सेल्सियस प्रति दशक की दर से और बढ़ सकती है। केवल आर्कटिक क्षेत्र को देखें तो वहां इस दौर में तापमान 1.1 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है।

आयोग ने बताया है कि इस समय स्थिति इतनी बिगड़ गई है कि 1850 से लेकर अब तक के सबसे गर्म दशक पिछले तीन दशक रहे हैं। वर्ष 2014 सबसे गर्म वर्ष रहा। अंटार्कटिक में 159 अरब टन बर्फ एक वर्ष में पिघल रही है। आर्कटिक सागर में बर्फ एक वर्ष में 50,000 वर्ग कि.मी. की दर से पिघल रही है। समुद्रों का जल स्तर बढ़ता जा रहा है। मात्र 0.8 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि पर यह हाल है तो 2.0 डिग्री सेल्सियस और 4.0 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि पर क्या नज़ारा होगा?

वर्ष 2010 में संयुक्त राष्ट्र संघ पर्यावरण कार्यक्रम ने वर्ष 2020 तक के उत्सर्जन के जो अनुमान प्रस्तुत किए वे 21वीं शताब्दी में तापमान वृद्धि 2.0 डिग्री सेल्सियस तक रोकने के अनुकूल नहीं है अपितु 21वीं शताब्दी के अंत तक 2.50 डिग्री सेल्सियस से 5.0 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि का संकेत देते हैं। वर्ष 2012 में संयुक्त राष्ट्र महानिदेशक द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ पैनल ने बताया कि वर्ष 1990 तक

समस्या की गंभीरता का पता लगने के बावजूद वर्ष 1990 और 2009 के बीच कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इससे पता चलता है कि समस्या की गंभीरता का पता चलने के बावजूद कितने कम असरदार कदम उठाए गए हैं।

वर्ष 2014 में जलवायु बदलाव पर अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक पैनल की रिपोर्ट में बताया गया था कि ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन वर्ष 2000 के बाद पहले से भी तेज़ी से (लगभग 2 प्रतिशत प्रति वर्ष) बढ़ता रहा है। वर्ष 2015 में *लेंसेट* आयोग ने बताया कि शताब्दी के अंत तक तापमान वृद्धि 2.60 से 4.80 डिग्री सेल्सियस तक होने की संभावना है।

वैसे यदि तापमान वृद्धि 2.0 डिग्री सेल्सियस तक रोकी जा सके तो भी कई प्रतिकूल परिणाम सामने आएंगे। अतः टापू देशों के प्रतिनिधियों व कई विशेषज्ञों ने भी मांग की थी कि तापमान वृद्धि को 1.50 डिग्री सेल्सियस तक सीमित किया जाए। परंतु उत्सर्जन पहले ही इतना बढ़ चुका है कि यह लक्ष्य संभव नहीं लगा। इसलिए 2.0 डिग्री सेल्सियस पर सहमति बनी। पर अब लगता है कि यह लक्ष्य भी शायद प्राप्त न हो सके।

ऐसे कई निहित स्वार्थ हैं जो जलवायु बदलाव पर असरदार कार्रवाई में बाधा डालते रहे हैं। वर्ष 2010 में जब संयुक्त राज्य अमेरिका की संसद में ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में महत्वपूर्ण निर्णय की अपेक्षा थी, तो यहां के अनेक उद्योगपतियों ने इसे रोकने के लिए 50 करोड़ डॉलर खर्च करके एक बड़ा व सफल अभियान चलाया। यहां जलवायु बदलाव पर असरदार कार्रवाई का विरोध करने वालों का एक स्थाई अभियान है। हाल के एक अध्ययन से पता चलता है कि उसे प्रति वर्ष 90 करोड़ डॉलर की फंडिंग मिलती है।

कई समस्याओं के बावजूद अब पर्यावरणविद आस लगाए बैठे हैं कि इस वर्ष के अंत में पेरिस में आयोजित होने वाले जलवायु बदलाव महासम्मेलन में शायद कुछ असरदार निर्णय लिए जा सकें। जहां एक ओर यह ज़रूरी है कि ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन में निर्धारित लक्ष्यों के अनुकूल कमी करने को उच्च प्राथमिकता दी जाए, वहीं दूसरी ओर यह भी ज़रूरी है कि जलवायु बदलाव के नियंत्रण के कार्य को न्याय और समता के सिद्धांतों के अनुकूल किया जाए।

पहले सबसे धनी व औद्योगिक देश अपनी इस ऐतिहासिक ज़िम्मेदारी को स्वीकार करते थे कि ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि उनकी गतिविधियों के कारण अधिक हुई है और वे इसके नियंत्रण के लिए अधिक धन उपलब्ध करवाने को काफी हद तक तैयार थे। पर हाल के समय में वे इस ज़िम्मेदारी से पीछे हट रहे हैं।

ग्रीन क्लायमेट फंड के अंतर्गत वर्ष 2020 तक निर्धन व विकासशील देशों को जलवायु बदलाव नियंत्रण सम्बंधी कार्रवाई के लिए प्रति वर्ष 100 अरब डॉलर उपलब्ध करवाने का वायदा औद्योगिक देश कर चुके हैं। यह लक्ष्य वर्ष 2020 तक प्राप्त करना है, मगर इस दिशा में समुचित प्रगति हो नहीं रही है। औद्योगिक देशों का रवैया ढीला पड़ रहा है। अमेरिका, रूस, कनाडा, जापान जैसे कई औद्योगिक देशों ने अभी तक ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम करने के कानूनी तौर पर मान्य लक्ष्य स्वीकार नहीं किए है।

स्वयं ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी के अपेक्षित लक्ष्य स्वीकार करने के साथ औद्योगिक देशों को इस कार्य में विकासशील व सबसे कम विकसित देशों की समुचित सहायता करनी चाहिए ताकि उनकी क्षमता को इस तरह बढ़ाया जाए जिससे वे कम कार्बन वाले विकास पथ को अपनाएं तथा साथ में जलवायु बदलाव से जुड़ी आपदाओं व दुष्परिणामों का सामना करने की उनके सामर्थ्य में वृद्धि हो सके। इसके लिए औद्योगिक देशों को ज़रूरी तकनीकी जानकारी पेटेंट या बौद्धिक अधिकारों की बाधा के बिना उपलब्ध करवानी चाहिए। जलवायु बदलाव के खतरों से करोड़ों लोगों का जीवन जुड़ा है, अतः मुनाफे के मुद्दों को पीछे रखना चाहिए।

वैसे भी धनी देश अपनी कंपनियों के बड़े मुनाफे, रॉयल्टी, फीस, ब्याज आदि के रूप में निर्धन व विकासशील देशों से बहुत बड़ी राशि वसूलते हैं। अतः उन्हें चाहिए कि कम से कम जीवन की रक्षा वाले मामलों में अधिक उदार बनें। इस समय वे अपनी राष्ट्रीय आय का मात्र 0.29 प्रतिशत विकास सहायता के रूप में विकासशील व निर्धन देशों को देते हैं

जबकि इसका मानदंड 0.70 प्रतिशत तय किया गया है। यदि यह सहायता निर्धारित मानदंड तक बढ़ा दी जाए तो यह प्रति वर्ष 125 अरब डॉलर से बढ़कर 300 अरब डॉलर तक पहुंच सकती है। इसमें ग्रीन क्लायमेट फंड के 100 अरब डॉलर अतिरिक्त जुड़ें तो निर्धनता कम करने व पर्यावरण का संकट दूर करने के लिए काफी अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध होंगे जिनका उपयोग पूरी ईमानदारी व पारदर्शिता से सही प्राथमिकताओं के लिए होना चाहिए। इसके अलावा, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समता व सादगी के अनुकूल नीतियां अपनाना भी ज़रूरी है। ***(स्रोत फीचर्स)***